॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नम: ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

शुकरहस्य उपनिषद

विषय सूची

॥अथ शुकरहस्योपनिषत्॥ 3

शुकरहस्य उपनिषद 4

शान्तिपाठ 25

॥ श्री हरि ॥

॥अथ शुकरहस्योपनिषत्॥

॥ हरिः ॐ ॥

प्रज्ञानादिमहावाक्यरहस्यादिकलेवरम् ।
विकलेवरकैवल्यं त्रिपाद्राममहं भजे ॥

ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ १९॥

परमात्मा हम दोनों गुरु शिष्यों का साथ साथ पालन करे। हमारी रक्षा करें। हम साथ साथ अपने विद्याबल का वर्धन करें। हमारा अध्यान किया हुआ ज्ञान तेजस्वी हो। हम दोनों कभी परस्पर द्वेष न करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ ॥

॥ श्री हरि ॥

॥ शुकरहस्योपनिषत्॥

शुकरहस्य उपनिषद

अथातो रहस्योपनिषदं व्याख्यास्यामो देवर्षयो
ब्रह्माणं सम्पूज्य प्रणिपत्य पप्रच्छुर्भगवन्नस्माकं
रहस्योपनिषदं ब्रूहीति । सोऽब्रवीत् ।
पुरा व्यासो महातेजाः सर्ववेदतपोनिधिः ।
प्रणिपत्य शिवं साम्बं कृताञ्जलिरुवाच ह ॥ १॥

अब रहस्योपनिषद् का वर्णन किया जाता है । एक बार देवर्षियों ने देव ब्रह्माजी की पूजा की और हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए उनसे निवेदन किया – भगवन् ! आप हमारे लिए रहस्योपनिषद् का उपदेश करें । इस पर ब्रह्मा जी ने कहा-प्राचीनकाल में महातेजस्वी, तपोनिष्ठ, सम्पूर्ण वेदों के विग्रह स्वरूप श्री वेदव्यास जी ने पार्वती सहित भगवान् शिव को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और उनसे प्रार्थना की॥१॥

श्रीवेदव्यास उवाच ।
देवदेव महाप्राज्ञ पाशच्छेददृढव्रत ।
शुकस्य मम पुत्रस्य वेदसंस्कारकर्मणि ॥ २॥

ब्रह्मोपदेशकालोऽयमिदानीं समुपस्थितः ।
ब्रह्मोपदेशः कर्तव्यो भवताद्य जगद्गुरो ॥ ३॥

श्री वेदव्यास बोले- हे देवों के देव- महादेव ! महाप्राज्ञ ! हे जगत् पाशों के उच्छेदक ! हे सुदृढ़ व्रतधारी ! मेरे पुत्र शुकदेव के वेदाध्ययन संस्कार कर्म में प्रणव और गायत्री मन्त्रोपदेश का समय आ गया है। हे जगद्गुरो ! आप उसके लिए मन्त्रोपदेश कर्त्तव्य को स्वीकार करें॥२-३॥

ईश्वर उवाच ।
मयोपदिष्टे कैवल्ये साक्षाद्ब्रह्मणि शाश्वते ।
विहाय पुत्रो निर्वेदात्प्रकाशं यास्यति स्वयम् ॥ ४॥

भगवान् शिव ने कहा- हे महामुने ! यदि मैं तुम्हारे पुत्र को शुद्धस्वरूप साक्षात् सनातन परब्रह्म का उपदेश करूँगा, तो वह सब कुछ त्यागकर, वैराग्यवान् होकर स्वयं ही प्रकाशस्वरूप को प्राप्त हो जाएगा॥४॥

श्रीवेदव्यास उवाच ।
यथा तथा वा भवतु ह्युपनायनकर्मणि ।
उपदिष्टे मम सुते ब्रह्मणि त्वत्प्रसादतः ॥ ५॥

श्री वेदव्यास जी ने निवेदन किया- चाहे जैसा भी हो, मेरे पुत्र के उपनयन संस्कार कर्म में आप अनुग्रहपूर्वक उसे ब्रह्मज्ञान का उपदेश करें॥५॥

सर्वज्ञो भवतु क्षिप्रं मम पुत्रो महेश्वर ।
तव प्रसादसम्पन्नो लभेन्मुक्तिं चतुर्विधाम् ॥ ६॥

हे महेश्वर ! मेरा पुत्र शीघ्र ही सर्वज्ञानी हो और आपके अनुग्रह का पात्र बनकर वह चतुर्विध मुक्ति (सायुज्य, सामीप्य, सारूप्य एवं सालोक्य) को प्राप्त हो जाए॥६॥

तच्छ्रुत्वा व्यासवचनं सर्वदेवर्षिसंसदि ।
उपदेष्टुं स्थितः शम्भुः साम्बो दिव्यासने मुदा ॥ ७॥

श्री वेदव्यास जी की प्रार्थना स्वीकार कर भगवान् शिव भगवती उमा सहित देवर्षियों की सभा में उपदेश देने के लिए गये और प्रसन्नतापूर्वक एक दिव्य आसन पर अधिष्ठित हुए॥७॥

कृतकृत्यः शुकस्तत्र समागत्य सुभक्तिमान् ।
तस्मात्स प्रणवं लब्ध्वा पुनरित्यब्रवीच्छिवम् ॥ ८॥

वहाँ शुकदेव मुनि भगवान् शिव से भक्तिपूर्ण अवस्था में सत्संग का लाभ लेकर कृतकृत्य हुए। प्रणव दीक्षा लेकर पुनः वे भगवान् से प्रार्थना करने लगे॥८॥

श्रीशुक उवाच ।
देवादिदेव सर्वज्ञ सच्चिदानन्द लक्षण ।
उमारमण भूतेश प्रसीद करुणानिधे ॥ ९॥

मुनि शुकदेव जी ने निवेदन किया- हे देवों के आदि देव ! हे सर्वज्ञ ! हे सच्चिदानन्द स्वरूप ! हे उमापते ! आप सम्पूर्ण प्राणियों पर कृपा करने वाले करुणा के भण्डार हैं, आप मुझ पर प्रसन्न हों॥९॥

उपदिष्टं परब्रह्म प्रणवान्तर्गतं परम् ।
तत्त्वमस्यादिवाक्यानां प्रज्ञादीनां विशेषतः ॥ १०॥

श्रोतुमिच्छामि तत्त्वेन षडङ्गानि यथाक्रमम् ।
वक्तव्यानि रहस्यानि कृपयाद्य सदाशिव ॥ ११॥

आपने मेरे लिए प्रणव स्वरूप और उससे परे परब्रह्म का उपदेश किया है, परन्तु मैं विशेषरूप से 'तत्त्वमसि', 'प्रज्ञानं ब्रह्म' प्रभृति महावाक्यों का तत्त्व षडङ्गन्यास क्रमपूर्वक सुनने की इच्छा रखता हूँ। हे सदाशिव ! कृपापूर्वक मेरे लिए उन रहस्यों को प्रकट करें॥१०-११॥

श्रीसदाशिव उवाच ।
साधु साधु महाप्राज्ञ शुक ज्ञाननिधे मुने ।
प्रष्टव्यं तु त्वया पृष्टं रहस्यं वेदगर्भितम् ॥ १२॥

भगवान् शिव ने कहा- हे ज्ञाननिधि मुनि शुकदेव ! तुम निश्चय ही महान् प्रज्ञावान् हो। तुमने वेदों के गूढ़ रहस्यों के व्यावहारिक स्वरूप का प्रश्न किया है॥१२॥

रहस्योपनिषन्नाम्ना सषडङ्गमिहोच्यते ।
यस्य विज्ञानमात्रेण मोक्षः साक्षान्न संशयः ॥ १३॥

सो मैं तुम्हारे लिए इस रहस्योपनिषद् नामक गूढ़ विषय का षडङ्गन्यास पूर्वक वर्णन करता हूँ। इसका (अनुभूतिजन्य) विशेष ज्ञान हो जाने से साक्षात् मोक्ष प्राप्ति में कोई संशय नहीं है॥१३॥

अङ्गहीनानि वाक्यानि गुरुर्नोपदिशेत्पुनः ।
सषडङ्गान्युपदिशेन्महावाक्यानि कृत्स्नशः ॥ १४॥

उपयुक्त यही है कि गुरु के द्वारा अङ्गहीन वाक्यों का उपदेश नहीं किया जाना चाहिए, सब महावाक्यों का षडंग सहित उपदेश करना चाहिए॥१४॥

चतुर्णामपि वेदानां यथोपनिषदः शिरः ।
इयं रहस्योपनिषत्तथोपनिषदां शिरः ॥ १५॥

जैसे चारों वेदों में उपनिषदें सर्वश्रेष्ठ हैं, वैसे सम्पूर्ण उपनिषदों में रहस्योपनिषद् सर्वश्रेष्ठ है॥१५॥

रहस्योपनिषद्ब्रह्म ध्यातं येन विपश्चिता ।
तीर्थैर्मन्त्रैः श्रुतैर्जप्यैस्तस्य किं पुण्यहेतुभिः ॥ १६॥

जिस तत्त्वदर्शी विचारक ने इस रहस्योपनिषद् में वर्णित ब्रह्म का चिन्तन-मनन किया है, उसे पुण्यदायक कारणों तीर्थ-सेवन, मन्त्र-पाठ, वेद-पाठ तथा जप आदि करने से क्या प्रयोजन है?॥१६॥

वाक्यार्थस्य विचारेण यदाप्नोति शरच्छतम् ।
एकवारजपेनैव ऋष्यादिध्यानतश्च यत् ॥ १७॥

सौ शरद् ऋतुओं (वर्षों) तक महावाक्यों के अर्थों पर विचार करने से जिस फल की प्राप्ति होती है, वह फल इन वाक्यों के ऋष्यादि के स्मरण सहित एक बार जप करने से ही प्राप्त होता है॥१७॥

ॐ अस्य श्रीमहावाक्यमहामन्त्रस्य हंस ऋषिः ।
अव्यक्तगायत्री छन्दः । परमहंसो देवता ।
हं बीजम् । सः शक्तिः । सोऽहं कीलकम् ।
मम परमहंसप्रीत्यर्थे महावाक्यजपे विनियोगः ।
सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
नित्यानन्दो ब्रह्म तर्जनीभ्यां स्वाहा ।
नित्यानन्दमयं ब्रह्म मध्यमाभ्यां वषट् ।
यो वै भूमा अनामिकाभ्यां हुम् ।
यो वै भूमादिपतिः कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ।
एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ॥

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म हृदयाय नमः ।
नित्यानन्दो ब्रह्म शिरसे स्वाहा ।
नित्यानन्दमयं ब्रह्म शिखायै वषट् ।

यो वै भूमा कवचाय हुम् ।
यो वै भूमाधिपतिः नेत्रत्रयाय वौषट् ।
एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म अस्त्राय फट् ।
भूर्भुवःसुवरोमिति दिग्बन्धः । ॥१८-२०॥

ॐ इस महावाक्य महामंत्र के हंस ऋषि हैं, अव्यक्त गायत्री छन्द है, परमहंस देवता हैं, हं बीज मंत्र है, सः शक्ति है, सोऽहं कीलक है। परमहंस देवता की प्रीति के लिए महावाक्य जपने हेतु मेरे द्वारा विनियोग है। करन्यास के लिए ब्रह्म सत्य, ज्ञानमय और अनन्त है, उसे नमस्कार है- अँगूठे का स्पर्श ब्रह्म नित्य (शाश्वत) आनन्द स्वरूप है, उसे नमन है- तर्जनी अँगुली का स्पर्श । ब्रह्म नित्यआनन्दमय है, उसे नमन है- मध्यमा अँगुली का स्पर्श । जो अति-विस्तृत है (वह ब्रह्म है), उसे नमन है- अनामिका अँगुली का स्पर्श । जो अतिविस्तृत का (भी) अधिपति है (वह ब्रह्म है), उसे नमन है- कनिष्ठिका अँगुली का स्पर्श । ब्रह्म एक एवं अद्वितीय है, उसे नमन है- करतल एवं कर पृष्ठ का स्पर्श। ब्रह्म सत्य, ज्ञानमय एवं अनन्त है उसे नमन है- हृदय (स्थान) का स्पर्श । ब्रह्म नित्य आनन्द स्वरूप है, उसे नमस्कार है, सिर का स्पर्श । ब्रह्म नित्य आनन्दमय है, उसे नमन है- शिखा का स्पर्श । जो विस्तृत है (वह ब्रह्म है), उसे नमन है- दायें -बाँयें कन्धे का स्पर्श। जो विस्तृत का अधिपति है, (वह ब्रह्म है), उसे नमन है- दोनों नेत्रों का स्पर्श । ब्रह्म एक और अद्वितीय है, उसे नमन है- दायें हाथ को सिर के ऊपर से घुमाकर बायें हाथ पर ताली बजाएँ। ॐ (परब्रह्म) भूः (भू), भुवः (अन्तरिक्ष) और स्वः (द्युलोक) में संव्याप्त है, उसे नमस्कार है- सभी दिशाओं से रक्षा का विधान ॥१८-२०॥

ध्यानम् ।
नित्यानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं
विश्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ॥

एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥२१॥

ध्यान-जो सदा ही आनन्दरूप, श्रेष्ठ सुखदायी स्वरूप वाले, ज्ञान के साक्षात् विग्रह रूप हैं। जो संसार के द्वन्द्वों (सुख-दुःखादि) से रहित, व्यापक आकाश के सदृश (निर्लिप्त) है तथा जो एक ही परमात्म तत्त्व को सदैव लक्ष्य किये रहते हैं। जो एक हैं, नित्य हैं, सदैव शुद्ध स्वरूप है, (झंझावातों में) अचल रहने वाले, सबकी बुद्धि में अधिष्ठित, सब प्राणियों के साक्षिरूप, राग-आसक्ति आदि भावों से दूर, लोभ, मोह, अहंकार जैसे सामान्य त्रिगुणों से रहित हैं, उन सद्गुरु को हम नमस्कार करते हैं॥२१॥

अथ महावाक्यानि चत्वारि । यथा ।
ॐ प्रज्ञानं ब्रह्म ॥ १॥

ॐ अहं ब्रह्मास्मि ॥ २॥

ॐ तत्त्वमसि ॥ ३॥

ॐ अयमात्मा ब्रह्म ॥ ४॥

तत्त्वमसीत्यभेदवाचकमिदं ये जपन्ति
ते शिवस्सायुज्यमुक्तिभाजो भवन्ति ॥ ॥२२॥

अब चार महावाक्य दिये जाते हैं। ॐ प्रज्ञानम् ब्रह्म (प्रकृष्ट ज्ञान ब्रह्म है)॥१॥ॐ अहं ब्रह्मास्मि(मैं ब्रह्म हूँ)॥२॥ॐ तत्त्वमसि(वह ब्रह्म तुम्ही हो)॥३॥ॐ अयमात्मा ब्रह्म(यह आत्मा ब्रह्म है)॥४। इनमें से यह 'तत्त्वमसि' महावाक्य ब्रह्म से अभेद का प्रतिपादन करता है। जो साधक इसका जप (चिन्तन-मनन) करते हैं, वे भगवान् शिव की सायुज्य मुक्ति का फल प्राप्त करते हैं ॥२२॥

तत्पदमहामन्त्रस्य । परमहंसः ऋषिः ।
अव्यक्तगायत्री छन्दः । परमहंसो देवता ।
हं बीजम् । सः शक्तिः । सोऽहं कीलकम् ।
मम सायुज्यमुक्त्यर्थे जपे विनियोगः ।
तत्पुरुषाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
ईशानाय तर्जनीभ्यां स्वाहा ।
अघोराय मध्यमाभ्यां वषट्
सद्योजाताय अनामिकाभ्यां हुम् ।
वामदेवाय कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ।
तत्पुरुषेशानाघोरसद्योजातवामदेवेभ्यो
नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।
एवं हृदयादिन्यासः ।
भूर्भुवःसुवरोमिति दिग्बन्धः ॥ ॥२३॥

तत्पुरुष को नमस्कार है- अँगूठे का स्पर्श । ईशान को नमन – तर्जनी का स्पर्श। अघोर को नमन- मध्यमा अँगुली का स्पर्श । सद्योजात को नमन- अनामिका का स्पर्श । वामदेव को नमन- कनिष्ठिका का स्पर्श । तत्पुरुष, ईशान, अघोर, सद्योजात और वामदेव को नमन है- करतलकरपृष्ठ का स्पर्श । इसी प्रकार हृदयादि न्यास का क्रम है। ॐ (परमात्मा) भूः (भूलोक), भुवः (अन्तरिक्ष लोक) एवं स्वः (दयुलोक) में संव्याप्त है- उसे नमस्कार है- सभी दिशाओं से रक्षा का विधान॥२३॥

ध्यानम् ।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यादितीतं शुद्धं बुद्धं मुक्तमप्यव्ययं च ।
सत्यं ज्ञानं सच्चिदानन्दरूपं ध्यायेदेवं तन्महोभ्राजमानम् ॥ ॥२४॥

वह ज्ञानरूप, जानने योग्य है एवं ज्ञानगम्यता से परे भी है। वह विशुद्ध रूप, बुद्धिरूप, मुक्तरूप, अविनाशी रूप है। वही सत्य, ज्ञान, सच्चिदानंदरूप ध्यान करने योग्य है। हमें उस महातेजस्वी देव का ध्यान करना चाहिए॥२४॥

त्वंपद महामन्त्रस्य विष्णुरृषिः ।
गायत्री छन्दः । परमात्मा देवता ।
ऐं बीजम् । क्लीं शक्तिः । सौः कीलकम् ।
मम मुक्त्यर्थे जपे विनियोगः ।
वासुदेवाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
सङ्कर्षणाय तर्जनीभ्यां स्वाहा ।

प्रद्युम्नाय मध्यमाभ्यां वषट् ।
अनिरुद्धाय अनामिकाभ्यां हुम् ।
वासुदेवाय कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ।
वासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्धेभ्यः
करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।
एवं हृदयादिन्यासः ।
भूर्भुवःसुवरोमिति दिग्बन्धः ॥॥२५॥

यहाँ महामन्त्र के त्वम् पद के ऋषि- विष्णु हैं। छन्द-गायत्री है। देवता- परमात्मा है। बीज- 'ऐं' है। शक्ति- क्लीं है। कीलक-सौः है। मेरी मुक्ति के लिए जप का विनियोग है। करेन्यास- वासुदेव को नमस्कार है- अँगूठे का स्पर्श । संकर्षण को नमन- तर्जनी का स्पर्श । प्रद्युम्न को नमन- मध्यमा का स्पर्श । अनिरुद्ध को नमन- अनामिका का स्पर्श। वासुदेव को नमन- कनिष्ठिको का स्पर्श । वासुदेव, संकर्षण प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध को नमन- करतल- कर पृष्ठ का स्पर्श। इसी प्रकार हृदयादिन्यास (अंगन्यास) का क्रम है। ' भूर्भुवः स्वः ॐ' यह दिग्बन्ध है॥२५॥

ध्यानम् ॥

जीवत्वं सर्वभूतानां सर्वत्राखण्डविग्रहम् ।
चित्ताहङ्कारयन्तारं जीवाख्यं त्वंपदं भजे ।॥२६॥

आप सभी प्राणियों में जीवस्वरूप हैं, सर्वत्र अखण्ड विग्रह रूप हैं तथा हमारे चित्त और अहंकार पर नियंत्रण करने वाले हैं। जीवों के रूप में त्वं (तत्त्वमसि के अन्तर्गत) पद की हम स्तुति करते हैं॥२६॥

असिपदमहामन्त्रस्य मन ऋषिः ।
गायत्री छन्दः । अर्धनारीश्वरो देवता ।
अव्यक्तादिर्बीजम् । नृसिंहः शक्तिः ।
परमात्मा कीलकम् । जीवब्रह्मैक्यार्थे जपे विनियोगः ।
पृथ्वीद्व्यणुकाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
अब्द्व्यणुकाय तर्जनीभ्यां स्वाहा ।
तेजोद्व्यणुकाय मध्यमाभ्यां वषट् ।
वायुद्व्यणुकाय अनामिकाभ्यं हुम् ।
आकाशद्व्यणुकाय कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ।
पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशद्व्यणुकेभ्यः
करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।
भूर्भुवःसुवरोमिति दिग्बन्धः ॥ ॥२७॥

महामन्त्र के 'असि' पद के ऋषि- मन हैं। छन्द-गायत्री है। देवता-अर्धनारीश्वर हैं। बीज-अव्यक्तादि है। शक्ति-नृसिंह है। कीलक-परमात्मा है। जीव-ब्रह्म के ऐक्य के लिए जप में निम्न विनियोग है। करन्यास- पृथ्वी द्वयणुक को नमन- अँगूठे का स्पर्श । अप् (जल) द्वयणुक को नमन- तर्जनी का स्पर्श। तेज (अग्नि) द्वयणुक को नमन-मध्यमा का स्पर्श । वायु द्वयणुक को नमन- अनामिका का स्पर्श । आकाश द्वयणुक को नमन- कनिष्ठिका का स्पर्श । पृथ्वी, अप्, तेज, वायु तथा आकाश के द्वयणुक को नमन करतल-कर पृष्ठ

का स्पर्श । इसी प्रकार हृदयादि न्यास का क्रम है। ' भूर्भुवः स्वः ॐ' यह दिग्बन्ध है॥२७॥

ध्यानम् ॥

जीवो ब्रह्मेति वाक्यार्थं यावदस्ति मनःस्थितिः ।
ऐक्यं तत्त्वं लये कुर्वन्ध्यायेदसिपदं सदा ॥ ॥२८॥

जीव ही ब्रह्म है इस महावाक्य के अर्थ पर जो विचार करता हुआ मन को स्थिर करता है, तथा 'असि' पद का सदैव चिन्तन-मनन करता है, वह तत्त्व को ऐक्य प्रदान करने में समर्थ होता है (पंचतत्त्व अन्त में एक- ब्रह्म में विलीन हो जाते हैं।)॥२८॥

एवं महावाक्यषडङ्गान्युक्तानि ॥ ॥२९॥

इस प्रकार महावाक्यों के षडङ्गों का विवेचन किया गया॥२९॥

अथ रहस्योपनिषद्विभागशो वाक्यार्थश्लोकाः प्रोच्यन्ते ॥ ॥३०॥

अब रहस्योपनिषद् के वाक्यों के अर्थ वाचक श्लोकों का उपदेश किया जाता है॥३०॥

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।

स्वाद्वस्वादु विजानाति तत्प्रज्ञानमुदीरितम् ॥ ३१॥

प्राणी जिसके द्वारा देखता, सुनता, सूँघता, बोलता और स्वाद-अस्वाद का अनुभव करता है, वह प्रज्ञान कहा जाता है॥३१॥

चतुर्मुखेन्द्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु ।
चैतन्यमेकं ब्रह्मातः प्रज्ञानं ब्रह्म मय्यपि ॥३२॥

चतुर्मुख ब्रह्मा, इन्द्रदेव, सम्पूर्ण देवता, मनुष्य, अश्व, गौ आदि पशु और अन्य सभी प्राणियों में एक ही चैतन्य सत्ता- 'ब्रह्म' अवस्थित है, वही प्रज्ञान ब्रह्म मुझमें भी समाया हुआ है॥३२॥

परिपूर्णः परात्मास्मिन्देहे विद्याधिकारिणि ।
बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फुरन्नहमितीर्यते ॥ ३३॥

यह हमारा शरीर ही परिपूर्ण ब्रह्मविद्या प्राप्ति का अधिकारी है। इसमें साक्षिरूप में अवस्थित परमात्म-बुद्धि के स्फुरित होने पर उसे 'अहं' कहा जाता है॥३३॥

स्वतः पूर्णः परात्मात्र ब्रह्मशब्देन वर्णितः ।
अस्मीत्यैक्यपरामर्शस्तेन ब्रह्म भवाम्यहम् ॥३४॥

स्वतः स्थापित परिपूर्ण परमात्मा को यहाँ 'ब्रह्म' शब्द से वर्णित किया गया है। 'अस्मि' शब्द से ब्रह्म और जीव की एकता का बोध होता है। इस प्रकार 'मैं ही ब्रह्म हूँ' (यह अर्थ निकलता है।)॥३४॥

एकमेवाद्वितीयं सन्नामरूपविवर्जितम् ।
सृष्टेः पुराधुनाप्यस्य तादृक्त्वं तदितीर्यते ॥३५॥

सृष्टि के पूर्व द्वैत के अस्तित्व से रहित, नाम एवं रूप से रहित, एकमात्र, सत्यस्वरूप, अद्वितीय 'ब्रह्म' था तथा वह ब्रह्म अब भी विद्यमान है। वही ब्रह्म 'तत्' पद (तत्त्वमसि) में वर्णित है॥३५॥

श्रोतुर्देहेन्द्रियातीतं वस्त्वत्र त्वंपदेरितम् ।
एकता ग्राह्यतेऽसीति तदैक्यमनुभूयताम् ॥ ३६॥

उपदेशों का श्रवण करने वाले शिष्य के आत्मतत्त्व को, जो शरीर-इन्द्रियों से परे है, 'त्वम्' पद से | वर्णित किया गया है। 'असि' पद के द्वारा 'तत्' और 'त्वम्' पदों के वाच्यार्थ ब्रह्म और आत्म तत्त्व के ऐक्य को अनुभव करना चाहिए॥३६॥

स्वप्रकाशापरोक्षत्वमयमित्युक्तितो मतम् ।
अहङ्कारादिदेहान्तं प्रत्यगात्मेति गीयते ॥ ३७॥

उस ('अयमात्मा ब्रह्म' के अन्तर्गत) स्वप्रकाशित परोक्ष तत्त्व को 'अयं' पद के द्वारा प्रतिपादित किया गया है। अहंकार से लेकर शरीर तक को प्रत्यक् आत्मा कहा गया है॥३७॥

दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतस्तत्त्वमीर्यते ।
ब्रह्मशब्देन तद्ब्रह्म स्वप्रकाशात्मरूपकम् ॥३८॥

इस सम्पूर्ण दृश्यमान जगत् में जो तत्त्व संव्याप्त है, वह ब्रह्म शब्द से वर्णित किया जाता है। वही ब्रह्म स्वयं प्रकाशित आत्मतत्त्व के रूप में (प्राणियों में) संव्याप्त है॥३८॥

अनात्मदृष्टेरविवेकनिद्रामहं मम स्वप्नगतिं गतोऽहम् ।
स्वरूपसूर्येऽभ्युदिते स्फुटोक्तेर्गुरोर्महावाक्यपदैः प्रबुद्धः ॥३९॥
\

मैं अनात्म पदार्थों में आत्म तुष्टि के कारण अविवेक की निद्रा में, "मैं,"मेरे' की सम्मोहित स्थिति में स्वप्न सदृश विचरण कर रहा था। गुरु द्वारा प्रदत्त महावाक्य पदों के उपदेश से, आत्मस्वरूप सूर्य के अभ्युदय से मैं प्रबुद्ध हुआ हूँ। (ऐसा मुनि शुकदेव अनुभव करते हैं।)॥३९॥

वाच्यं लक्ष्यमिति द्विधार्थसरणीवाच्यस्य हि त्वंपदे
वाच्यं भौतिकमिन्द्रियादिरपि यल्लक्ष्यं त्वमर्थश्च सः ।
वाच्यं तत्पदमीशताकृतमतिर्लक्ष्यं तु सच्चित्सुखा-
नन्दब्रह्मतदर्थ एष च तयोरैक्यं त्वसीदं पदम् ॥ ४०॥

महावाक्यों के अर्थों के निमित्त वाच्य और लक्ष्य दोनों अर्थों का अनुसरण करना चाहिए। वाच्यानुसार भौतिक इन्द्रियादि भी 'त्वम्' पद के वाच्य होते हैं, परन्तु इन्द्रियों से परे चैतन्य परमात्मा ही लक्ष्यार्थ है। इसी प्रकार 'तत्' पद का वाच्य प्रभुता सम्पन्न सर्वकर्ता परमात्मा और लक्ष्यार्थ सच्चिदानंद स्वरूप ब्रह्म है। यहाँ 'असि' पद से उक्त दोनों पदों के लक्ष्यार्थ द्वारा जीवात्मा और ब्रह्म के एकत्व का प्रतिपादन हुआ है॥४०॥

त्वमिति तदिति कार्ये कारणे सत्युपाधौ
द्वितयमितरथैकं सच्चिदानन्दरूपम् ।
उभयवचनहेतु देशकालौ च हित्वा
जगति भवति सोयं देवदत्तो यथैकः ॥ ४१॥

कार्य और कारण रूप दो उपाधियों के द्वारा 'त्वं' और 'तत्' पदों में भेद प्रतिपादित है। उपाधिरहित होने पर दोनों ही एक सच्चिदानंद रूप हैं। जगत् में भी दोनों वचन (यह और वह) प्रत्येक देश और काल में कहा गया है। इनमें यह और वह निकाल देने पर एक ही ब्रह्म शेष रहता है, जैसे – वह देवदत्त है और यह देवदत्त है- इन दोनों वाक्यों में 'देवदत्त' एक ही है॥४१॥

कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः ।
कार्यकारणतां हित्वा पूर्णबोधोऽवशिष्यते ॥ ४२॥

यह जीव कार्यरूप उपाधि वाला और ईश्वर कारण रूप उपाधि वाला है। इन कार्य और कारण रूप उपाधियों को छोड़ देने पर विशुद्ध ज्ञान रूप ब्रह्म ही शेष रहता है॥४२॥

श्रवणं तु गुरोः पूर्वं मननं तदनन्तरम् ।
निदिध्यासनमित्येतत्पूर्णबोधस्य कारणम् ॥ ४३॥

शिष्य (साधक) को पूर्ण बोध तभी हो सकता है, जब वह प्रथम गुरु के द्वारा उपदेश सुने, फिर मनन करे, तदनन्तर निदिध्यासन (अनुभूति की साधना) करे॥४३॥

अन्यविद्यापरिज्ञानमवश्यं नश्वरं भवेत् ।
ब्रह्मविद्यापरिज्ञानं ब्रह्मप्राप्तिकरं स्थितम् ॥४४॥

अन्य विद्याओं का भली-भाँति प्राप्त हुआ ज्ञान अवश्य ही नश्वर है, परन्तु ब्रह्म विद्या का भली प्रकार प्राप्त हुआ ज्ञान ब्रह्म प्राप्ति में समर्थ है॥४४॥

महावाक्यान्युपदिशेत्सषडङ्गानि देशिकः ।
केवलं न हि वाक्यानि ब्रह्मणो वचनं यथा ॥४५॥

देव ब्रह्मा जी का वचन है कि गुरु अपने शिष्य को षडंगों से युक्त महावाक्यों का उपदेश करे, महावाक्य मात्र का उपदेश ही न करे॥४५॥

ईश्वर उवाच ।
एवमुक्त्वा मुनिश्रेष्ठ रहस्योपनिषच्छुक ।
मया पित्रानुनीतेन व्यासेन ब्रह्मवादिना ॥ ४६॥

भगवान् शिव ने मुनि शुकदेव से कहा- हे शुकदेव ! तुम्हारे पिता वेदव्यास जी ब्रह्मज्ञानी हैं, उन पर प्रसन्न होकर ही मैंने तुम्हारे प्रति इस रहस्योपनिषद् को कहा है॥४६॥

ततो ब्रह्मोपदिष्टं वै सच्चिदानन्दलक्षणम् ।
जीवन्मुक्तः सदा ध्यायन्नित्यस्त्वं विहरिष्यसि ॥ ४७॥

इसमें सच्चिदानंद स्वरूप ब्रह्म का उपदेश है, जो तप से प्राप्त किया जाता है। तुम उस ब्रह्म का चिन्तन करते हुए जीवन मुक्त हो जाओगे॥४७॥

यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः ।
तस्य प्रकृतिलीनस्य यः परः स महेश्वरः ॥ ४८॥

जो वेद के आरम्भ में स्वररूप ॐकार उच्चरित होता है तथा जो वेदान्त में प्रतिष्ठित है, जो प्रकृति में समग्र रूप से लीन होकर भी उससे परे है, वही महेश्वर है॥४८॥

उपदिष्टः शिवेनेति जगत्तन्मयतां गतः ।
उत्थाय प्रणिपत्येशं त्यक्ताशेषरिग्रहः ॥ ४९॥

भगवान् शिव के इस प्रकार के उपदेश को सुनकर मुनि शुकदेव सम्पूर्ण जगरूप परमेश्वर में तन्मय हो गये। तदनन्तर उठकर भगवान् को हाथ जोड़कर प्रणाम कर सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग करके (तपोवन) चल दिये॥४९॥

परब्रह्मपयोराशौ प्लवन्निव ययौ तदा ।
प्रव्रजन्तं तमालोक्य कृष्णद्वैपायनो मुनिः ॥ ५०॥

उन्हें प्रव्रज्या में जाते देखकर श्री वेदव्यास जी (कृष्ण द्वैपायन मुनि) को वियोग दुःख हुआ, परन्तु मुनि शुकदेव परब्रह्म रूप सागर में निर्द्वन्द्व तैरने के समान आनन्दमग्न थे॥५०॥

अनुव्रजन्नाजुहाव पुत्रविश्लेषकातरः ।
प्रतिनेदुस्तदा सर्वे जगत्स्थावरजङ्गमाः ॥ ५१॥

पुत्र के वियोग में कातर हुए श्री वेदव्यास जी उनके पीछे चलते हुए उन्हें पुकारने लगे। उस समय उनकी पुकार का प्रत्युत्तर सम्पूर्ण जगत् के जड़-चेतन पदार्थों ने दिया॥५१॥

तच्छ्रुत्वा सकलाकारं व्यासः सत्यवतीसुतः ।
पुत्रेण सहितः प्रीत्या परानन्दमुपेयिवान् ॥ ५२॥

उस उत्तर को सुनकर अपने पुत्र को सम्पूर्ण जगत् में संव्याप्त जानकर सत्यवती पुत्र मुनि वेदव्यास जी ने पुत्र के सहित व्यापक अनन्तरूप परब्रह्म की प्राप्ति की॥५२॥

यो रहस्योपनिषदमधीते गुर्वनुग्रहात् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः साक्षात्कैवल्यमश्नुते
साक्षात्कैवल्यमश्नुत इत्युपनिषत् ॥॥५३॥

जो साधक गुरु के अनुग्रह से इस रहस्योपनिषद् के तत्त्व दर्शन को जान लेता है, वह समस्त पापों से मुक्त होकर साक्षात् कैवल्य पद को प्राप्त होता है, यही उपनिषद् है॥५३॥

॥हरिः ॐ तत्सत् ॥

शान्तिपाठ

ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ १९॥

परमात्मा हम दोनों गुरु शिष्यों का साथ साथ पालन करे। हमारी रक्षा करें। हम साथ साथ अपने विद्याबल का वर्धन करें। हमारा अध्यान किया हुआ ज्ञान तेजस्वी हो। हम दोनों कभी परस्पर द्वेष न करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

॥ इति शुकरहस्योपनिषत्समाप्ता ॥

॥ शुकरहस्य उपनिषद समात ॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ॥